जैन दर्शन

जिसके द्वारा देखा जावे अर्थात् जीवन व जीवन विकास का ज्ञान प्राप्त किया जाए, उसे दर्शन कहते हैं। युक्ति पूर्वक तत्त्व-ज्ञान को प्राप्त करने के प्रयत्न को ही दर्शन कहते हैं। दर्शन में आत्मा, परलोक, विश्व, ईश्वर आदि गूढ़ विषयों को समझने का प्रयत्न किया जाता है। धर्म में आत्मा को परमात्मा बनने का मार्ग बताया जाता है। धर्म प्रवर्तकों ने केवल आचार-रूप धर्म का ही उपयोग नहीं किया है, अपितु स्वभाव रूप धर्म का भी उपदेश दिया है, जिसे दर्शन कहा जाता है।

जिनेन्द्र भगवान के द्वार प्रतिपादित दर्शन ही जैन दर्शन है। छह द्रव्य, सात तत्व, नौ पदार्थ आदि का इनमें मुख्यतया वर्णन है। जैन धर्म आत्मा, परमात्मा व पुनर्जन्म में विश्वास करता है।

यद्यपि दर्शन और धर्म (वस्तु स्वभावआचार रूप धर्म) दोनों अलग अलग विषय हैं, फिर भी दोनों का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। यह सर्वविदित है कि विचार के अनुसार ही मनुष्य का आचार भी होता है। जैसे - जो व्यक्ति आत्मा, परलोक और पुनर्जन्म को नहीं मानता है, उसकी प्रवृत्ति व आचार भोगवादी होगा और जो इन्हें मानता है, उसकी प्रवृत्ति और आचार इसके विपरीत (निवृत्ति की ओर) होगा। इस प्रकार विचारों का प्रभाव मनुष्य के आचार पर गहरा पड़ता है। अत: दर्शन का प्रभाव धर्म पर भी गहरा पड़ता है और एक को समझे बिना दूसरे को समझा नहीं जा सकता है। जैन धर्म भी एक दर्शन है। चूंकि वह वस्तु स्वभाव रूप धर्म में ही अंतर्भूत हो जाता है, अत: उसे भी हम धर्म का ही एक अंग समझते हैं। अत: जैन दर्शन से अभिप्राय जिन द्वारा कहे गये विचार और आचार दोनों ही लेना चाहिये।

जैन दर्शन की विशेषताऐं -

जैन दर्शन के मूल सिद्धान्त, अनेकान्तवाद, स्याद्वाद, अहिंसा, अपरिग्रह, छ: द्रव्य, सात तत्व, नौ पदार्थ आदि हैं। इनका विवरण आगे यथा स्थान दिया गया है लेकिन जैन दर्शन की कुछ अन्य विशेषताओं का वर्णन यहां दिया जा रहा है।

1. ईश्वर सृष्टि का कर्ता हर्ता नहीं -

जैन धर्म ईश्वर की सत्ता को तो स्वीकार करता है, मगर अन्य धर्मों की भांति ईश्वर को इस सृष्टि का बनाने वाला, पालने वाला और नाश करने वाला नहीं मानता है। जो आत्मा मोक्ष प्राप्त करके लोक के शिखर पर विराजमान होकर अनन्त सुख भोग रही है, वे ही जैन धर्म के अनुसार ईश्वर, भगवान, सिद्ध आदि नामों से जाने जाते हैं। ये किसी भी कार्य के कर्ता या हर्ता नहीं हैं अपितु मात्र ज्ञाता व दृष्टा हैं। इनका अब इस संसार के किसी भी कार्य से किसी प्रकार का संबंध नहीं रहा

है। ये कृतकृत्य हैं अर्थात कोई भी कार्य इनके करने हेतु बाकी नहीं रहा है। वे किसी का भी हित या अहित नहीं करते हैं। इस प्रकार वे सृष्टि के कर्ता, पालक या हर्ता नहीं हो सकते हैं।

जैन धर्म यह भी नहीं मानता है कि किसी दुष्ट व्यक्ति को दंडित करने तथा सज्जन व्यक्ति की रक्षा करने वाली कोई शक्ति (ईश्वर) होती है। जैन धर्म के अनुसार प्रत्येक जीव स्वयं के द्वारा किये गये कर्मों के अनुसार ही विभिन्न योनियां धारण करता है और सुख दु:ख उठाता है। ऐसी कोई अन्य शक्ति नहीं है जो उसे सुख या दु:ख दे सके।

जैन धर्म के अनुसार जीव अजीव द्रव्य का कर्म प्रकृति अनुसार एक देश संयोग ही जगत का कर्ता हर्ता है। इसके द्वारा संसार अनादि काल से रचा हुआ है। इन्हें किसी ने बनाया नहीं है और संसार में स्वतन्त्र हैं। ये ही संसार की सबसे बड़ी ताकतें हैं जो संसार में कार्य कर रही हैं। इनके अलावा अन्य कोई शक्ति नहीं है। जीव अजीव द्रव्यों का यह खेल अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा।

2. कर्म सिद्धान्त -

जैन धर्म का यह महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। संसारी जीव जन्म मरण के चक्र में फंसा हुआ है। उसके परिणाम राग द्वेष रूपी होते हैं, जिससे नये कर्म बंधते हैं। कर्मों के बंधने से गतियों में जन्म लेना पड़ता है। जन्म लेने पर शरीर मिलता है। शरीर में इंद्रियां होती हैं जो अपने विषयों को ग्रहण करती हैं। विषयों के ग्रहण करने से इष्ट विषयों में राग और अनिष्ट विषयों में द्वेष उत्पन्न होते हैं और फिर रागी द्वेषी परिणामों से कर्म बंधकर यह चक्र चलता ही रहता है। यह चक्र अनादि काल से चला आ रहा है और अनादि काल तक चलता ही रहेगा। यदि जीव ऐसे सार्थक प्रयास करके आत्मा के साथ बंधे कर्मों का सर्वथा नाश (अभाव) कर देता है, तो उसे शुद्ध अवस्था प्राप्त हो सकती है, जिसे मोक्ष कहा जाता है। जीव द्वारा मोक्ष प्राप्त करना जैन दर्शन का सर्वोच्च लक्ष्य है।

अंग्रेजी की कहावत में **"As we sow, so we reap"** भी यही भाव दर्शाया गया है कि हम जैसे कर्म करेंगे, वैसे ही फल भोगेंगे।

जीव इन कर्मों का नाश करके अपने को कर्मों से सर्वथा मुक्त कर लेता है तो वही जीव परमात्मा (ईश्वर) बन जाता है। इस प्रकार जैन दर्शन इस कर्म सिद्धान्त के माध्यम से आत्मा से परमात्मा बनने की कला सिखाता है। प्रत्येक जीव अपने आत्म-पुरुषार्थ से आत्मा की इस परम विशुद्ध अवस्था को प्राप्त कर सकता है।

3. पुनर्जन्म -

जैन धर्म पुनर्जन्म में विश्वास करता है। जैन धर्म के अनुसार जब तक जीव कर्मों से मुक्त नहीं हो जाता है, अर्थात मोक्ष प्राप्त नहीं कर लेता है, तब तक उसका पुन: पुन: जन्म विभिन्न योनियों में होता रहता है। मोक्ष पद प्राप्त करने के पश्चात जीव का पुन: जन्म नहीं होता है।

आज के वैज्ञानिक युग में पुनर्जन्म के समाचार यदा-कदा प्रकाशित होते रहते हैं। कुछ बच्चे अपने पूर्व जन्म के माता, पिता, पत्नी, गांव, मित्र आदि के नाम बता देते हैं और सम्बंधित ग्राम में जाकर उन्हें पहचान भी लेते हैं इससे यह स्पष्ट होता है कि पुनर्जन्म होता है। यह भी जानने योग्य है कि यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य मर कर मनुष्य गति में ही जन्म ले। वह अपने कर्मों के अनुसार किसी भी गति में जन्म ले सकता है।

4. मोक्ष मार्ग -

जैन धर्म यह भी सिखलाता है कि पुन: पुन: जन्म से मुक्ति कैसे प्राप्त हो। इस हेतु जैन आगम में एक सिद्धान्त प्रतिपादित है - सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणिमोक्षमार्ग: । इसके अनुसार सम्यक रूप से दर्शन, ज्ञान व चारित्र के होने से ही जीव को मुक्ति मिल सकती है और यही मोक्ष का एक मात्र मार्ग है। आत्मा के उद्धार के लिये अन्य कोई रास्ता नहीं है। हिन्दु धर्म में भक्ति मार्ग, ज्ञान मार्ग और कर्म मार्ग अलग-अलग मोक्ष के मार्ग हैं, मगर जैन धर्म में सम्यक दर्शन-ज्ञान-चारित्र की एक रूपता ही एक मात्र मोक्ष का मार्ग है।

5. अहिंसा -

अहिंसा जैन धर्म का आधार स्तम्भ है। जैन धर्म में प्राणी मात्र के कल्याण की भावना निहित है। जैन धर्म में मनुष्य, पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े के अलावा पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पति को भी जीव माना गया है। जैन धर्म के अनुसार इन जीवों को न मारना अहिंसा है। किसी का दिल दुखाना तथा अपने अन्दर राग-द्वेष जनित विकारी भावों की उत्पत्ति को हिंसा माना गया है। भगवान महावीर के प्रमुख संदेष हैं - अहिंसा परमो धर्म: तथा जियो और जीने दो।

6. काल परिवर्तन -

जैन धर्म के अनुसार कालचक्र एक बार उत्सर्पिणी रूप और एक बार अवसर्विणीरूप में परावर्तन करता है और इनमें 24-24 तीर्थंकर होते हैं जिनके द्वारा जैन धर्म प्रकाशित व उपदिष्ट हुआ है। भविष्य में भी इसी प्रकार 24-24 तीर्थंकर होते रहेंगे।

7. अवतार परम्परा नहीं -

जैनधर्म के अनुसार कोई भी व्यक्ति अपनी कठोर तप-साधना से भगवान बन सकता है और जो कोई भगवान बन जाता है उसका पुनर्जन्म नहीं होता है। इस प्रकार भगवान बनने वाल व्यक्ति का पुन: भगवान के रूप में अवतरित होना सम्भव नहीं है।

8. देव शास्त्र गुरु -

जैन धर्म में ऋषियों की परम्परा, उनकी चर्या, धार्मिक साहित्य, तीर्थ, आत्मा व परमात्मा का स्वरूप, मूर्तियों की मुद्रा, उपासना क्रिया आदि अन्य धर्मों से भिन्न हैं। पूज्य व पूज्यता में भी अन्तर है। जैन धर्म में वीतरागी देव और वीतरागता ही पूज्य है।

इस प्रकार जैन धर्म अन्य धर्मों से भिन्न व स्वतन्त्र धर्म है जो अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा।

संकलन -

सुशीला पाटनी

आर. के. हाऊस

मदनगंज - किशनगढ़